ॐ

प्रतिमा तत्व

दृष्ट्वारूपे व्याकरोत्सत्यानृते प्रजापतिः ।
अश्रद्धामनृतेदधाच्छ्रद्धाᳬसत्ये प्रजापतिः ॥

[यजु० अ० १९ मं० ७७]

धर्म्म प्रचारक आचार्य्य

श्री मधुसूदन गोस्वामी प्रणीत

(ग्रन्थकार की मुद्रास्वाक्षर रहित पुस्तक चोरी की होगी पता लगाने से ५) पारितोषिक)

मिरज़ापूर ।

आनन्द कादम्बिनी यन्त्रालय में मुद्रित हुई ।

सन् १८८८ ई०

प्रथम वार १०००   मूल्य ।) आना मात्र

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

जिन महानुभावों ने धर्म प्रचार में अर्थ सहाय्य किया है उनके पवित्र नाम यहाँ प्रकाशित होते हैं:—

१ बाबू श्रीकार्तिक प्रसाद चचीय डिबरूगढ़, आसाम ६)

२ राय गूदड़ सहाय बखरा मुज़फरपूर ५)

३ श्रीमान् महाराज नृहरिसिंह देव बहादुर कि० कांकरे-छत्तीसगढ़ ५)

४ श्रीयुत् पण्डित जगन्नाथ भारती छीपीवाड़ा, देहली (मुहर की दुअन्नी)

(ह०) श्रीमधुसूदन गोस्वामी।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्रीलक्ष्मीधर - विद्यामन्दिर.
देवप्रयाग (गढ़वाल-हिमालय)
व्यवस्थापक- प. चक्रधरजोशी

समर्पण।

प्राणनाथ !

ये प्राण पक्षी आप के विरह में व्याकुल हैं सर्वदा आप से मिलने की (अजात पक्षाइव मातरं खगा:) चेष्टा करते हैं परंतु इनकी क्या शक्ति है ये निष्पक्ष (साधन रहित) हैं आप की कृपा का एक मात्र आश्रय है! दयित ! केवल आप की प्रतिमूर्तीं और चित्र, चिन्हादिकों से समय व्यतीत होता है तिसपर चवाई लोग ताने देते हैं ! इस का विशेष क्या लिखूं ! हां ! लिखूं क्या आप तो हृदय ही में हैं क्या कहीं दूर हैं नहीं ! सखे ! फिर इतनी कठोरता क्यों ! क्या परीक्षा के लिये ! भला अशुल्क दास की परीक्षा क्या ? जो चाहो सो करो ! (मत्प्राण नाथ स्तु भवान्न चापर:)

वही पादपद्म मधुसूदन
मधुसूदन

—***—

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

साहाय्याभ्यर्थन ।

मैं उपासना तत्व, आर्य समाजीय रहस्य प्रभृति सनातन धर्म की रक्षार्थ कई ग्रन्थ लिख चुका हूं और धर्म प्रचारार्थ विदेश में व्याख्यान भी दिये हैं समाचार पत्रों में धर्म विषयक लेख भी लिखे हैं अब यह प्रतिमा तत्त्व आप लोगों की सन्निधि में भेजा है। और १ आचार्य नामक मासिक पत्र प्रकाश करने का विचार है परंतु विना साहाय्य के क्या हो सकता है बंगाल के और बम्बई प्रांत के राजा महाराजा सेठ साहूकार धनी महाजन जमींदार सब अपने २ देश में धर्म प्रचारकों की सहायता कर रहे हैं मुझे पूर्ण आशा है कि हमारे देश के राजा महाराजा सेठ साहूकार धनी महाजन जमींदार सब जो लाखों रुपया प्रति वर्ष दान करते हैं उस में से कुछ अंश धर्म प्रचार की सहायता में देकर आशीर्वाद भाजन होंगे॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्रीलक्ष्मीधर-विद्यामन्दिर.
देवप्रयाग (गढ़वाल-हिमालय)
व्यवस्थापक- प. चक्रधरजोशी

ॐ

प्रतिमातत्त्व ।

———o*o———

इस दुःख सागर विडंबनामय असार संसार में जीव को सुख की प्राप्तिके निमित्त सर्व मंगल मूर्ति परमेश्वर के आराधन भिन्न और कोई आनंद का उपाय नहीं है, यदिच जीव का स्वभाव ही आनंद है, परंतु प्रभू की भक्ति बिना स्वरूपानंद भी जीव को नहीं मिलता सुवर्ण का स्वरूप ही चमकीला है, परन्तु यदि धूलिसे लिप्त हो तो बिना धोये उज्वल नहीं होसक्ता है, और यदि उस में दूसरी धातु मिली हुई हो तो धोने से भी निर्मल न होगा परन्तु उस को अग्नि द्वारा शुद्ध करना होगा; बस जीव के भी ऊपर के दोषोंके शुद्ध करने को सदाचार, धर्मानुष्ठान और कर्मवासनादि रूप आंतरिक मल दूर करने को परमेश्वर की भक्ति की आवश्यकता है, जीव का स्वरूप परमेश्वर का नित्य दास है, भक्ति द्वारा यह झलकने लगता है बस जब भक्ति बढ़ती है तब परमेश्वर की प्रतिमा पूजन बिना रहा नहीं जाता क्योंकि यह स्वाभाविक धर्म्म है, हम को जिस से सतत्र प्रेम होता है उसके चित्र में उस की मूर्ती में उसके चिन्हों में एक प्रकार का स्वाभाविक प्रेम उत्पन्न होता है, इसी प्रकार जीव अपने स्वरूप परमेश्वर के नितत्र दास्य को प्राप्त होकर परमेश्वर की मूर्ति, चित्र, चिन्ह, नाम, धाम, भक्तों से एक

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

प्रकार का स्वाभाविक प्रेम करने लगता है यह प्रेम किसी के उपदेश वा अपनी इच्छा से नहीं होता है परन्तु अचिंत्य शक्ति स्वभाव ही से होता है, जैसा कि चुम्बक के पास आने ही से लोहे में परिचालना पैदा होती है। बस जो लोग प्रतिमा पूजन का निषेध कर परमेश्वर की भक्ति का उपदेश करते हैं वे प्रकृति को बदला चाहते हैं, सूर्य को पश्चिम में उदय कराया चाहते हैं, समुद्र को सुखाया चाहते हैं, वायु को बांधा चाहते हैं, अग्नि को शीत स्पर्श किया चाहते हैं, हिम को तप्त किया चाहते हैं, पानी में पत्थर उतराया चाहते हैं, पट पर नौका बहाया चाहते हैं। स्वभाव के विरुद्ध करने की शक्ति किसी को नहीं है "स्वभावस्थमिदं सर्वं सदेवासुरमानुषम्" क्या कोई पुरुष स्वभाव को फेर सक्ता है ? कभी नहीं ! अनेक लोग किसी दुराग्रह वश होकर परमेश्वर को निराकार कहने लगते हैं, और प्रतिमा पूजन की निंदा करने लगते हैं, किंतु जब वे निष्पक्ष होकर भक्ति भाव से गद्गद होकर परमेश्वर के आगे अपना हृदय खोलते हैं तब वे साकारवादी हो जाते हैं, प्राचीनों में शंकराचार्य्य को देखिये। "दामोदर गुणमन्दिर सुन्दर वदनारविन्द गोविन्द" इसमें वदनारविन्द से क्या उनका अभिप्राय "दो पैसे में अजब तमाशा एक कटा हुआ सिर मेज पर रखा बात करे" ऐसे केवल वदनारविन्द से है? कभी नहीं० एक वदनारविन्द होने से ही सर्वावयव सुंदर निराकार परब्रह्म से है, क्योंकि आगे फिर लिखा है "शरणं करवाणि तावकौ चरणौ" मधुसूदन सरस्वती भी लिखते हैं "पू-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

र्णेन्दुसुन्दरमुखादरविन्दनेत्रात्" । इधर नवीनों में आइये तो राजा राममोहन राय, बाबू केशवचंद्र सेन प्रभृति महानुभावों ने ऐसे २ पद लिखे हैं। मैं आप के चरणों में आत्मार्पण कर चुका हूं, पित: मैं कभी आप के करुणा पूरित अंक में लालित होऊंगा ? और प्रतिमा पूजन के परम विरोधी स्वामी दयानंद सरस्वती भी न रह सके शुद्ध हृदय से लिख दिया "परमात्मा अपने पर कृपा दृष्टि करे" क्या वहां स्वामी जी का अभिप्राय दृष्टि से ऐसा है जैसा चीन वाले, बरमा वाले, कागज़ की दो आंखें काट कर पुरातन समय में अपने जहाजों पर लगाया करते थे ? नहीं सर्वथा साकार वाद प्रतिमा पूजन पर ही है, हाँ कोई क्यों न हो जब वो दूसरे को पराभव करने को वा अपनी वाचालता दिखाने को कुछ कहैगा वा लिखेगा तब साकार वाद प्रतिमा पूजन का खंडन करैगा, परन्तु स्वाभाविक धर्म सरल वृत्ति से जब कुछ कहेगा तभी साकार वाद प्रतिमा पूजन आ जायगा, कारण यह कि छिपाने के अनेक उपाय करने पर भी स्वत: सिद्ध जो कुछ है वह कभी न कभी प्रकाश होही जाता है। यदिच प्रतिमा पूजन करना स्वाभाविक धर्म है परन्तु आज कल लोगों को यह भ्रम दिला दिया है कि वेद में कहीं प्रतिमा पूजन नहीं लिखा है इस भ्रमके निवृत्त करने को मैं यहां थोड़ेसे वैदिक मंत्रों को प्रकाश करता हूं, जिन में प्रतिमा पूजन का सविस्तर वर्णन है। प्रतिमा क्या पदार्थ है ? प्रतिमा से ईश्वर से क्या सम्बन्ध है ? यह सब उपासना तत्व में वर्णहो त

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

चुका है, अतः पुनर्वर्णन नहीं हुआ, जो उसमें अपेक्षित है सो इसमें वर्णित होता है। यहां पर इतना और जानना चाहिये कि यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण में लिखा है "नाम रूपे सत्यम्" अर्थात् परमेश्वर के रूप और नाम दोनों सत्य हैं जिस प्रकार नाम का स्मरण कर उपासना होती है, उसी प्रकार रूप का दर्शन स्पर्शन करके भी उपासना होती है, जिस प्रकार एक परमेश्वर के इन्द्र, वायु, अग्नि, यम, वरुण, सरस्वती, प्रभृति नाम वेद में वर्णित हैं, उसी प्रकार एक परमेश्वर की विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, गणेश, नृसिंह, परशुरामादि मूर्ति हैं। जब किसी नाम से परमेश्वर का स्मरण करते हैं तब उस शब्द के साथ विभक्ति और लिंग लगाना होता है, जो कहेंगे हे अग्ने! तब अग्नि के साथ पुल्लिंग और संबोधन प्रथमा विभक्ति लगानी होगी, जब कहेंगे 'ओंब्रह्म' तब ब्रह्म शब्द के साथ नपुंसक लिंग और प्रथमा विभक्ति लगानी ही पड़ेगी जब "हे आपः" कहेंगे तब स्त्रीलिंग और प्रथमा विभक्ति बहुवचन लगाना ही पड़ेगा, इसी तरह जब विष्णु मूर्ति निर्माण करेंगे तब चतुर्भुज शंख चक्रादि विभूति पुरुषाकार करना होगा, जो शिव मूर्ति निर्माण करेंगे तो पंचमुख पुरुषाकार डमरू त्रिशूल संयुक्त करेंगे, यदि दुर्गा की मूर्ति होगी स्त्र्याकार पाशांकुशादि संपन्न करनी होगी, सारांश यह कि परमेश्वर वेद शब्दों के अगोचर है (१) तथापि शब्दातीत परमेश्वर को शब्द द्वारा संकेतित करते हैं और संकेतित शब्दों में स्त्री पुं नपुंसक आदि लिंग प्रथमादि वि-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

भक्ति और वचनों के साथ ही उच्चारण करते हैं, इसी तरह से लौकिक रूपातीत परमेश्वर की प्रतिमा लौकिक धातु काष्ठ पाषाण से निर्माण करते हैं और वह भी स्त्री पुरुषाद्याकार संयुक्त और मुखाद्यवयव सहित ही निर्माण की जाती है, तात्पर्य्य यह कि जिस प्रकार शब्दातीत परमेश्वर का नाम है, मनोऽगोचर का ध्यान है, इसी प्रकार निराकार का मूर्तिपूजन है, जो लोग परमेश्वर को निराकार मानकर प्रतिमा पूजन छोड़ देते हैं उनको चाहिये वचनातीत परमेश्वर का नाम और मनोऽगोचर परमेश्वर का मानसिक स्मरण भी छोड़ दें, क्या आप लोग जब 'न तस्य प्रतिमा अस्ति' इसको पुकार पुकार कर प्रतिमा पूजन का निषेध करते हैं तब 'यतो वाचो निवर्त्तन्ते' 'यद्वा-चानभ्युदितं' 'अप्राप्य मनसासह' 'यन्मनो न मनुते' इन वाक्यों को पुकार पुकार कर परमेश्वर के नामोच्चारण और मानसिक स्मरण का क्यों नहीं निषेध करते ? क्या आप प्रतिमा पूजन के निषेध करते समय इन वाक्यों को भूल जाते हैं ? क्या आप स्तुति प्रार्थना के समय इस बात के विचारने को स्वप्न में भी बुद्धि को परिश्रम नहीं देते हैं कि परमेश्वर वाणी व मन के अगोचर है, अब हम क्या करते हैं, अस्तु यह सब वैज्ञानिक विचार बुद्धिमानों के लिये है, वही विचार सक्ते हैं कि जैसा वाङ्मनोऽगोचर का नाम चिंतन है वैसा ही लौकिक रूप रहित परब्रह्म का प्रतिमा पूजन है, परमेश्वर ने जीवों के उद्धार के निमित्त ही प्रतिमा पूजन की इच्छा का निगूढ़ तत्व

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

उत्पन्न किया है जो वेद लोक और युक्ति द्वारा सिद्ध है।

परमेश्वर की साकारता का वर्णन।

'प्रथमं जनित्रमित्येतद्व त्वष्टा प्रथमꣳ रूपं विचकाराग्रे' शतपथ कां० ७ अ० ५ प्र० ४ 'प्रथमं जनित्रं' इसका यह अर्थ है 'त्वष्टा' (परमेश्वर ने) सब से प्रथम रूप किया॥ 'आत्मैवेदमग्र आसीत् पुरुष विधः' शतपथ कां० १४ अ० ४० प्र० ३। प्रथम यह समस्त संसार आत्मा ही था 'कैसा था' पुरुषाकार था 'ब्रह्म वा इदमग्र एक एवासीत् एक मेव तदेकꣳ सन्नव्यंभवत् ततः श्रेयो रूप मत्य सृजत्' शतपथ १४ कां० अ० ३ प्र०। यह सब जगत् प्रथम एक ब्रह्म था एकही था एकही वह नित्य नवीन हुआ तब उसने मंगलमय अपना रूप सृजा। कौन २ किस रूप का उपासक है यह भी शतपथ में स्पष्ट लिखा है 'अथ कथमद्दस्येदं रूप मिति, दैवो वा अस्य स आत्मा, मानुषोयं तद्यत्स हिरण्मयो भवति अमृतं वा अस्य तद्रूपं देवरूपममृतम् हिरण्मथ यदियंमृदः कृता भवति मानुषꣳह्यस्येदं रूपं कां० ७ अ० ५ प्र० ४।

कौन परमेश्वर का रूप है? आत्मादैव (देवताओं का उपास्य) रूप है मनुष्यों का उपास्य हिरण्मय (सुवर्ण आदिक धातुओं से निर्माण कराया गया) परन्तु यह न जानो कि सुवर्णादि निर्मित्त मूर्ति अश्रद्धेय हैं, क्योंकि दैव और मानुष परमेश्वर के दोनो रूप अमृत अर्थात् नित्य सत्य हैं, इतना और विशेष है कि हिरण्मय शब्द से मनुष्यों के उपास्य मृत्तिका के रूप भी हैं 'यह उपलक्षण है' काष्ट पाषाण चित्रा-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

दिक सभी मनुष्यों के उपास्य रूप हैं)

तमेतमग्निरिति अध्वर्यव उपासते *** ऊर्गिति देवा रयिरिति मनुष्या मायेत्यसुराः स्वधेति पितरः तं यथा यथोपासते तथैव भवति शतः १ कां० १० प्र० ३ अ० ५

उस को अग्नि रूप से अध्वर्यु उपासना करते हैं। ऊर्ग रूप से देवता, रयि (मूर्त्ति) रूप से मनुष्य (तस्मान्मूर्त्तिरेवरयी मूर्त्ति ही का रयी नाम है) माया रूप से असुर इसी प्रकार उस को और रूप से भी उपासना करते हैं उस को जैसा २ उपासना करते हैं वो तैसा ही होता है।

अत्रैव सर्वोग्निसंस्कृतः तस्मिन् देवा एतदमृतं रूपमुत्तमं दधुः तथैवास्मिन्ननयमेतदमृतं रूप मुत्तमं दधाति पुरस्ताद्रम्यां तनुं मध्यतो दधाति रुक्मं च पुरुषं च रम्यया तन्वा प्रच्छादयति शत० का० ८ अ० ३ प्र० २

इसी लोक में परमेश्वर का समस्त संस्कार होता है जिस तरह देवता इस अमृत रूप को धारण करते हैं इसी प्रकार मनुष्य भी उस अमृत रूप को धारण करते हैं (किस तरह से) अपने आगे रमणीय सुवर्ण मूर्त्ति को धर कर सुवर्ण में मूर्त्ति और परमेश्वर को पूर्ण करते हैं। अर्थात् ईश्वर और मूर्त्ति का अभेद भावना करते हैं। यह तो ब्राह्मणादि भागों

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

के विधि वाक्य दिखलाये अब चारों संहिताओं के मूल मंत्र देखिये ॥

आयो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुषे पुरूणि । अथर्व० कांड ५ अनु० १ ॥

जो परमेश्वर प्रथम धर्मों को स्थिर करता है इसी लिये अपनी अनेक मूर्त्ति करता है, मूर्त्तिपूजन ही सनातन स्थिर धर्म है ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम । ऋ० ८ अ० १ व० ३ म० १

(स) परमेश्वरः [भूतस्य] स्थावरस्य जातः जंगमस्य (पतिः) रक्षकः (एक) आसीत् पृथवीं इमां द्यां च दाधार (उत) वितर्के अपिच (हिरण्यगर्भः) आसीत् हिरण्य मित्युपलक्षणं हिरण्यं सुवर्णरजतकाष्ठपाषाणादयो गर्भमिव मूर्त्तिप्रकाशका यस्य तथा विधः आसीत् अतः सति तन्मूर्तौ कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

अर्थः [स] वह परमेश्वर (भू० जा०) स्थावर जंगम का (प० रा०) रक्षक एकही था उसी ने पृथ्वी और स्वर्ग को धारण किया है वह प्रथम ही सृष्टि के आरंभ समय से हिरण्य गर्भ अर्थात् सुवर्णादि मूर्त्तिओं में प्रकट हुआ है जब हमारो

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

मूर्त्तिओं में साक्षात् ईश्वर है तब हम उसे छोड़ कर और किसकी पूजा करेंगे ॥

॥ सावर्ण भगवान का पूजन ॥

श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं मयिषाण ॥ यजु० ३१ अ० २२ मं०

(श्रीश्चते लक्ष्मीश्च) श्रीयते सर्वैरिति श्रीः 'भूः' लक्ष्मी च पद्मा [तेपत्न्यौ] (अश्विनौ) चलावपि । अहोरात्रे दिवानिशं [पार्श्वे] भवद्दक्षिणवामभागे नक्षत्राणि प्रकाश बहुले [व्यात्तं] स्थिते अतः ते (रूपं) मूर्त्तिः सर्वं संपत् संपन्नं (असुं) वैकुंठलोकं [इष्णन्] इच्छन् (मे) मह्यं इषाण संपादयतु [सर्वंलोकं मईषाण] सर्वं गजतुरगधनादिकं संपादयतु आदरेवीप्सा ॥

अर्थ—(श्रीश्च) भूशक्ति अर्थात् सत्ता रूपा और लक्ष्मी ये दोनों आप की पत्नी यदिच चंचल हैं परन्तु आप के पार्श्व में प्रकाश युक्त नित्य स्थित है (अतः प्रभो !) आप का सर्व शक्ति संपन रूप (इषाण) इच्छा कर हम को परलोक और इस लोक का गज तुरगादि धन संपादन करे हमारा ऐसा कोई सुकृत नहीं है केवल आप की इच्छा से आप के रूप का दर्शन अर्चन कर हम दोनों लोक के सुख को प्राप्त होंगे।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

। परमेश्वर की मूर्त्ति सर्वदेवमय है ।

यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे गात्राणि भेजिरे
तान् वै त्रयस्त्रिंशद्देवान् एके ब्रह्मविदो विदुः
अथर्व० कां १० प्र० २३

अन्वयः-यस्य अंगे [मूर्त्तौ] 'वर्त्तमानानि' गात्राणि त्रयस्त्रिंशद्देवा भेजिरे तान् वैत्रयस्त्रिंशद्देवान् एके यज्ञविदः [प्रतिमा तत्वज्ञाः] विदुः जानन्ति ॥

अर्थ (यस्य जिस परमेश्वर की (अंग) मूर्ति में विद्यमान (गात्रा०) कर चरणादिक अवयवों का तेतीस देवता आश्रय करते हैं (तान्वै) उन तेतीस देवताओं को प्रतिमा के तत्वज्ञ विरले भक्त ही जानते हैं अर्थात् यह एकांत भक्तों को ही विदित है कि परमेश्वर की प्रतिमा सर्वदेव मयी है।

केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्या अपेशसे
समुषद्भिरजायथाः। ऋ०मं १अ०२सू०६ मं०३

अन्वय: (हे) मर्याः 'मरण धर्माणो मनुष्याः' मर्या मनुष्याः निघं० २—३ (ईश्वरः) अकेतवे अज्ञाननिवृत्तये केतुं ज्ञानं 'केतुःप्रज्ञा' निघं० ३—८। अपेशसे निराकारतां निवर्तयितुं पेशः रूपं (पेशः रूपं निघं० १—२) उषद्भिः कमनीयैर्गुणैः सं अजायथाः सम्यक् प्रकटयति।

अर्थ (मर्या) हे मरण धर्मवाले मनुष्यगण ईश्वर तुम लोगों के अज्ञान निवृत्ति के लिये ज्ञान उत्पन्न करता है

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

निराकारता की निवृत्ति के लिये आकार अपने उत्तम गुण सहित उत्पन्न करता है, तुम लोग जो परमेश्वर को निराकार मानते हो यही तुम्हारा अज्ञान है, इस तुम्हारे अज्ञान की निवृत्ति के निमित्त परमेश्वर अपने प्रतिमादि रूप को प्रकाश करता है।

यथा लब्धोपचार से प्रतिमा पूजन का विधान ॥

कासीत्प्रमा प्रतिमा किं निदानमाज्यं किमासीत्परिधिः क आसीत्। छन्दः किमासीत् प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे ॥

ऋ० अ० ८ अ० ७ व० १८ मं० ३

अन्वयः । प्रश्न—प्रमा का परमेश्वरः कया प्रमियते ?

उ०—प्रतिमा।

प्र०—निदानं (निर्माणकारणं) किम् ?

उ०—आज्यं (प्राकट्य मात्रं येभ्यः प्रतिमानिर्माणं कर्त्तुं शक्यते तैरेव काष्ठपाषाणमृदादिभिः कुर्यात्।

प्र०—परिधिः कः [परिधीयतेऽस्मिन्निति परिधिः] स्थानं कीदृक् स्यात् यत्र मूर्तिः स्थाप्या ?

उ०—छन्दः 'छादनात् छन्दः' इति निरुक्त्या छादितं स्थानं स्यात् अन्तरिक्षे मूर्तिपूजनं न कार्य्यम्।

प्र०—'उ' वितर्के 'प्रगं' गमन साधनं यानं किम् ?

उ०—किमु [यत् किमपिरथगजतुरगनरादि कम्।

प्र०—देवा विद्वांसः देवं भगवन्तं कथं अयजन्त ?

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

उ०—'यत्' यथा लब्धोपचारैरेवार्चनं विधेयम् । वाको वाक्यमेतत् ।

अर्थ—वेद में ऐसे मंत्रो को वाको वाक्य कहते हैं जिन में प्रश्नोत्तर की रीतसे वर्णन होताहै जैसा कासीत् प्रमामें है॥

प्र०—परमेश्वर की प्रमा प्रमाण करने वाली क्या चीज़ है ?

उ०—प्रतिमा आज कल हम लोगों को प्रतिमा के भिन्न और क्या परमेश्वर का साक्षात् है केवल प्रतिमा द्वारा ही ईश्वर साक्षात्कार होता है ॥

प्र०—प्रतिमा का कारण क्या है अर्थात् किस चीज़ की प्रतिमा बनानी चाहिये ॥

उ०—जिस से बन सके काष्ठ पाषाण धातु प्रभृति ॥

प्र०—कैसे स्थान में प्रतिमा रखनी चाहिये ॥

उ०—छये में अन्तरीक्ष में पूजन न करना चाहिये ॥

प्र०—मूर्ति को स्थानान्तर लेजाने में कैसा यान चाहिये ॥

उ०—जो उतम हो हाथी, रथ, पालकी, व्योमयान आदिक ॥

प्र०—विद्वान् लोग भगवान् का पूजन किस प्रकार करते हैं ॥

उ०—यथा लब्धोपचार से भक्ति से पूजन करते हैं ।

अष्टविध मूर्त्ति निर्माण ॥

सं वर्चसा पयसा सं तनूभिरगन्महि मनसा स ँ शिवेन । त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽ नुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ॥

यजु० अ० २ मं० २४ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

अन्वय–जनाराभिर्हेतुभिर्भगवतः महिमानं अगन् प्राप्ताः (कथं) संवर्चसा प्रज्वलितवान्हिना लौहीं मूर्त्ति "पयसा" जलेन लेख्यां लेप्यां सैकतीं च मूर्तिं 'संतनूभिः' शस्त्रैः शैलीं दारुमयीं मणिमयीं च एवं सप्तविधां अष्टमीं मनोमयीं शुद्धेन मनसा प्राप्नुवन्ति कासां चिद्विशेषमाह 'सुदत्रः' सुष्टु छेत्ता 'त्वष्टा' शिल्पिः रायः यजमानस्य धनादिवृद्ध्यर्थं तन्वाः मूर्त्तेर्यद्विलिष्टं बलाय अवष्टम्भादिनिमित्तं तत् अनुमार्ष्टु मार्जयतु ।

अर्थ—इन हेतुओं से मनुष्य परमेश्वर की आठ प्रकार की मूर्ति को प्राप्त होते हैं (संवर्च) प्रज्वलित अग्निसे लौही अर्थात् धातुमयो मूर्त्ति निर्माण करते हैं, जल से लेख्या (चित्र) लेप्या (भीत में लिखकर) सैकतो (मृतिका की) शस्त्रों से शैलो (पाषाण को) दारुमयी (काष्ट की) मणिमयी (रत्न को) यह सात मूर्त्ति इन साधन से और आठवीं मनोमयी मूर्त्ति (मनसा स ए शिवेन) शुद्ध मन से निर्माण करते हैं; यह आठ प्रकार की मूर्त्ति का निर्माण प्रकार कहकर कुछ विशेष कहते हैं। 'चतुर शिल्पी को चाहिये यजमान के धन संतान सुख के निमित्त मूर्त्ति में जो अवयवों के रोकने को अवष्टंभ लगाये जाते हैं उन को भी दूर कर मूर्त्ति को शुद्ध करदे; मूर्त्ति के अंग न्यूनाधिक होने से यजमान का अनिष्ट होता है, अतः शुद्ध मूर्त्ति निर्माण करें ॥

॥ मूर्त्ति निर्माण का प्रमाण ॥

चतस्रश्च मे ऽष्टौ च मे ऽष्टौ च मे द्वादश च मे

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

द्वादश च मे षोड़श च मे षोड़श च मे विꣳशतिश्च मे विꣳशतिश्च मे चतुर्विꣳशतिश्च मे चतुर्विꣳशतिश्च मे ऽष्टाविꣳशतिश्च मे ऽष्टाविꣳशतिश्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳशच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च मे अष्टाचत्वारिꣳशच्च मे यज्ञे-न कल्पताम्॥ यजु० अ० १८ मं २५॥

अन्वयः—अत्र चतस्र इत्यादिभिरङ्गुलिप्रमाणानिनिर्णीतानि मे मम प्रतिमायामिवमङ्गादिकं कल्पनीयम्॥

अंगुलि प्रमाणम्।	अङ्गानि।
४	शीर्षं 'ललाटम्'
८	नासाश्चिबुकपर्यन्तम्
८	चिबुकपरिणाहकण्ठौ
१२	वक्षः
१२	उदरम्
१६	स्कन्धात् कपोणि पर्यन्तमधः सूत्रे
१६	एवं वामे
२०	कपोणिदेशादङ्गुलि पर्य्यन्त मन्तः सूत्रे
२०	एवं वामे
२४	ऊरुतः जानुपर्य्यन्तम्

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

२४	एवं वामे
२८	जानुतः गुल्फान्तम्
२८	एवं वामे
३२	शिरोमण्डलम्
३२	मुखमण्डलम्
३६	दक्षीणोरुमूलम्
३६	वामोरुमूलम्
४०	उदरम्
४०	पृष्ठ स्कन्धम्
४४	जघनमुरुद्वयसन्धिः
४४	नितम्बमण्डलम्
४८	कटिमण्डलम्

अर्थ—परमेश्वर की आज्ञा है—इतनी २ अंगुलिप्रमाण से अंग निर्माण कर मेरी प्रतिमा बनाओ इस से मनुष्यों के अंग की अपेक्षा कोई २ अंग छोटे बड़े हैं परन्तु वे दिव्य अंगों के अभिप्राय से हैं ॥

प्रतिमा पूजन की नित्यता ।

यज्ञे न यज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्माणिप्रथमा न्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्तः यत्रपूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ यजु० अ० ३१ मं० १६ ।

अन्वयः—'यज्ञे न' प्रतिमया 'यज्ञं' विष्णुं 'देवाः' विद्वांसः 'अयजन्त' तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् 'ते ह' प्रतिमा पूजकः

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

'नाकं' सर्वदुःखरहितं महिमानं देवाः प्राप्ताः यत्र पूर्वे साध्याः साधनसिद्धाः सन्ति ।

अर्थ—(यज्ञः) परमेश्वर की प्रतिमा द्वारा [यज्ञ] विष्णु का पूजन विद्वानों ने किया है प्रथम अर्थात् प्राचीन सनातन धर्म यही है वे प्रतिमा पूजक लोग सर्व दुःख रहित मोक्ष को प्राप्त होते हैं, जहां साधन सिद्ध महात्मा लोग हैं ॥

यज्ञ नाम परमेश्वर की प्रतिमा का है । शतपथ ब्राह्मण के कां० ११ प्र० १ में लिखा है ॥

"देवाश्चासुराश्चा उभये प्राजापत्या पस्पृधिरे ततो असुरा अतिमानेनैव कस्मिन्नु वयं गुह-वामेति स्वे स्वे वास्येषु जुह्वतश्चिरुस्तेति मानेनैव पराबभूवुः***अथ देवा अन्योन्ये षु जुह्वतः श्चेरुस्तेभ्यः प्रजापतिरात्मानं प्रददौ, अथैता मात्मनः प्रतिमामसृजत यद्यज्ञं तस्मादाह यज्ञः प्रजापतेः प्रतिमा ॥

इस का अर्थ यह है:—देवता और असुर दोनों आपस में स्पर्धा करते थे, असुरों ने बड़ा अभिमान किया और परमेश्वर को छोड़ कर अपने आप पूजन करने लगे इसी से उन का पराभव हुआ । और देवताओं ने परस्पर परमेश्वर का पूजन किया, तब परमेश्वर ने संतुष्ट होकर देवताओं को अपनी प्रतिमा पूजन करने को दी । इस से यह सिद्ध हुआ कि देव

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

सर्ग में परमेश्वर की प्रतिमा का पूजन सदैव से चला आता है और आसुर सर्ग में प्रतिमा का अभाव है; बस इसी अभिप्राय से श्री गीता में भगवान् ने कहा है—

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च।
दैवीमद्भक्तिमत् प्रोक्तआसुरः स्तद्विपर्ययः॥

यह न समझना कि शतपथ ब्राह्मण का अभिप्राय यज्ञ शब्द से प्रतिमा का नहीं है परन्तु अग्निष्टोमादि यज्ञ का है, क्योंकि अथर्व संहिता २ कां० ५ अनु० में लिखा है॥

यज्ञस्य चक्षुप्रभृतिर्मुखं वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि॥

अर्थ—यज्ञ के चक्षु-आंख आदिक ज्ञानेन्द्रिय और मुख वाणी आदि कर्मेन्द्रिय और मन बुद्धि प्रभृति अंतरिन्द्रिय हैं। अर्थात् परमेश्वर की मूर्त्ति सर्वावयव और सर्वेंद्रिय सपन्न हैं। बस यज्ञ शब्द से अग्निष्टोमादि क्रिया को जो यहां समझे उन की बुद्धि को बलिहारी है, क्योंकि उन को निरूप क्रिया मात्र यज्ञ की आंख, मुख, वाणी, बुद्धि दीखते होंगे॥

राह्यस्मानमा तिष्ठ अस्मा भवतु त तनुः।
अथर्व० कां० २ अनु० ३॥

अर्थ—हे परमेश्वर तुम आओ और इस पाषाण (पाषाण निर्मित मूर्ति) में स्थित होओ और यह पाषाण तुम्हारी तनु अर्थात् मूर्ति होय, हम इस पाषाण मयी मूर्ति ही को आप की अप्राकृत मूर्ति तुल्य पूजन करें।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

ऋषीणां प्रस्तरोऽसि नमोऽस्तु दैवाय प्रस्तराय।
अथर्व कां० १६ अ० १ ॥

अर्थ—हे परमेश्वर प्रतिमे तुम ऋषि लोगों की प्रस्तर प्रतिमा हो अर्थात् "उच्चावचैरभिप्रायैः ऋषीणां मन्त्र दृष्टयो भवन्ति" उच्च अवच अभिप्राय से ऋषी लोगों की मंत्र दृष्टि होती है इसी से मंत्र पूत पाषाण प्रतिमा तुझे भी प्रणाम है, त्वदंतर्वर्त्ती परमेश्वर तो सर्व पूज्य हई है, किन्तु तदधिष्टान होने से तुझे भी प्रणाम है यहां ऋषियों की उच्च अवच दृष्टि से यह तात्पर्य्य है कि जैसा नाम से और परमेश्वर से वाच्य वाचक संबंध है; ऐसाही प्रतिमा से और परमेश्वर से व्यज्य व्यंजक संबंध है। जैसा 'ॐ' वा 'ब्रह्म' कहने के समय अ० उ० म० इन अक्षरों का वा "ब् ० र् ० म् ० ह् ०" इन अक्षरों के स्मरण को इन के वाच्य परमेश्वर का स्मरण मानते हैं न कि वाचक अक्षरों का, इसी तरह धातु काष्ठ पाषाण की मूर्त्ति के अर्चन को उन के व्याज्य परमेश्वर का अर्चन मानते हैं नकि व्यंजक मूर्तिका।

बृहद्वयो हि भानवे ऽर्चादेवायाग्नये।
य मित्रं न प्रशस्तये मर्तासो दधिरे पुरः ॥
सामवेद १ अ० ९ खं० ८ ऋ०

अन्वय—अग्नये देवाय भानवे दीप्तिमते हि निश्चितं बृहत् उत्तमं वयः अन्नं (वयः अन्नं निघं, २२।२।७।) दीयते

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

मर्त्तासः मनुष्याः यं यस्य अर्चा मूर्तिं मित्रंनः सखाय मिव 'प्रशस्तये' स्तुतये 'पुरः' अग्रे दधिरे ॥

अर्थ – दीप्तिमान् परमेश्वर को भक्तजन निश्चय उत्तम अन्न देते हैं; अन्न देना उपलक्षण मात्र है; गंध चंदनादिक समस्त उपभोग्य वस्तु अर्पण करते हैं, क्यों जी क्या परमेश्वर कहीं उन के पास बैठा है कि जो चाहै सो अर्पण कर दें ? हां ! मनुष्य सब जिस परमेश्वर की अर्चा को सखा के समान आगे रख कर पूजन करते हैं, प्रतिमा द्वारा ही समस्त विषयार्पण कर परमेश्वर पूजन होता है ॥

अन्नाद्यर्पण पूर्वक भगवान् के पूजन का विधान ।

देवसवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय दिव्यो गन्धर्वःकेतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजंनः स्वदतु स्वाहा ॥

यजु० ६ अ० १ म०

अर्थ – हे 'देव सवितः, जगत् के उत्पन्न करने वाले परमेश्वर 'यज्ञं प्रसुव' अपनी प्रतिमा (जो आप ने हम लोगों के अनुग्रह को उत्पन्न की है) तद्द्वारा प्रतिमा पूजन करने वाले भक्त का मंगल ऐश्वर्य्य करो 'दिव्योगन्धर्वः' दिव्यतेजो मूर्ति परमेश्वर तुम हमारी बुद्धि को पवित्र करो ; सर्व वेद कर्ता तुम हमारे दिये अन्न को स्वादन करो। यहां बुद्धि की पवित्रता यही है कि हम तुम्हारी मूर्ति को तुम से अभिन्न जानें

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

क्योंकि मूर्ति को परमेश्वर भिन्न जड़ जानना ही बुद्धि का मल और दोष है ॥

भगवान की प्रतिमा के अर्पित्त महाप्रसाद अन्न का माहात्म्य ।

देवाः पितरो मनुष्या गन्धर्वाप्सरश्च ये॥ उच्छिष्टा जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिवि श्रितः ।

अथर्व० कां० ११ अ० २ प्र० २४ ॥

देव इन्द्रादिक पितृ अर्यमादिक मनुष्य प्रह्लादादिक गंधर्व विश्वावसु प्रभृति अप्सरा उर्वशी प्रभृति समस्त स्वर्गवासी तैजस रूपधारी गण भगवान् के उच्छिष्ट अर्थात् निवेदितान्न के सेवन से स्वर्ग गामी हुए हैं ।

प्रतिमा पूजन द्वारा मोक्ष प्राप्ति होना ।

ये यज्ञेन दक्षिणया समक्ता इन्द्रस्य सख्यममृतत्वमानश । तेभ्यो भद्रमङ्गिरसो वोऽस्तु प्रतिगृभ्णीत मानवं सुमेधसः ॥

ऋग्० । अ० ८ अ० ८ व० १० मं० १ ।

अन्वय—ईश्वरः उपदिशति हे सुमेधसः वः युष्माकं मध्ये दक्षिणया समक्ता गुरुभ्यो दत्त दक्षिणाः इन्द्रस्य परमेश्वरस्य यज्ञेन प्रतिमायां सख्यं प्रेमप्राप्ता जनाः अमृतत्वं मोक्षं

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

आनश ते अङ्गिरसा मे प्राणा इव प्रिया: तेभ्य: भद्रं अस्तु अत: यूयमपि मानवं मनुष्याकारां। मे प्रतिमां प्रति गृभ्णीत।

अर्थ—परमेश्वर जीवों को उपदेश करता है, हे सुंदर बुद्धिवाले मनुष्यों! तुम्हारे मध्य में जो लोग दीक्षा द्वारा गुरु सेवानन्तर सर्वशक्तिमय जो मैं परमेश्वर हूं मेरी प्रतिमा में प्रेम करते है, वे मोक्ष को प्राप्त होते हैं और मेरे प्राण के तुल्य प्रिय होते हैं उनका सदा भद्र होता है इसलिये तुमको उचित है कि तुम भी मेरी मनुष्याकार प्रतिमा ग्रहण करो, उसे स्वीकार करो अर्थात् पूजन करो लोगों के बहकाने से मत छोड़ो॥

प्रतिमापूजन को ही संसारनिस्तारकत्व है।

तुग्रोह भुज्युमश्विनोदमेघेरयिन्न कश्चिन् ममृवाँ अवाहा:। तमूहथुर्नौभिरात्मन्वतीभि रन्तरिक्ष प्रुद्भिरपोदकाभि:॥

ऋग्० अ० १ अ० ८ व० ८ मं ३॥

अन्वय:—'उदमेघे' संसार सागरे तुग्र: 'तुजहिंसाबला दाननिकेतनेषु' अस्माद्धातोरुणादि को रक् प्रत्यय: तेन। निकेतान्वेषी शरणाभिलाषी अर्थात् मुमुक्षु: एवं भुज्युं भोग मिच्छत् अर्थात् धनपुत्रादिदृष्टसुखार्थीच० अश्विना काष्ठ-पाषाणमृदादिना कृता रयिं मूर्त्तिं पूजयेत्। 'तस्मान्मूर्त्तिरेवरयी' प्रश्नोपनिषत् प्र० १ मं ५॥ य: मूर्त्तिपूजक: तं 'अवाहा' संसृतिप्रवाहरहिता सिद्धभक्ता: आत्मन्वतीभि नौभि: आत्म-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

ज्ञानमयैस्तरणसाधनैः अपोदकाभिः अप्रविष्टसंस्थतिदुःखैः (एष रूपका लङ्कारः) अन्तरिचप्रुद्भिर्व्योमयानै रूहथुः प्राप यन्तिः।

अर्थः--इस संसार सागर में जो शरणाभिलाषी अर्थात् मोक्ष चाहनेवाला हो और जो इस लोक के धन पुत्रादि सुख चाहनेवाला हो तो मेरी काष्ठ पाषाणादि से रची मूर्त्ति की पूजा करे, इस मूर्त्ति पूजक को सिद्ध भक्तगण आत्मज्ञान रूप (जीव परमेश्वर का नित्य दास है, परमेश्वर की सेवा और प्रेम इसका स्वाभाविक कर्म है बस यही जानना आत्मज्ञान है) नौका में (जिससे फिर सांसारिक दुख न रहे) बिठाकर और विमानों द्वारा परमेश्वर के निकट पहुंचाते हैं अर्थात् उसको परमेश्वर की साचात् नित्य सेवा में पहुंचाते हैं।

यह हम चारों वेदों से दिग्दर्शन मात्र मंत्र दिखा चुके और युक्ति भी संक्षेप से दिखाई है, युक्तियों का विशेष चमत्कार 'उपासना तत्व' में देखो यहां दो चार कुतर्कों का और मर्दन करते हैं।

वादी लोग कहते हैं 'अच्छा ईश्वर की प्रतिमा पूजन करना सिद्ध हो भी गया तब भी यह राम कृष्ण वाराहादि मूर्त्तियों का पूजन करना क्या है ?

इसका उत्तर यही है कि अनंत शक्ति और अनंत गुण परमेश्वर के गुण और शक्तियों का निदर्शन मात्र एक एक अवतार है, जैसा कि परमेश्वर में भक्त वात्सल्य एक गुण है; क्या जानें है वा नहीं उसका उदाहरण चाहिये, उसका उदा-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हरण श्री नृसिंहजी ही हैं जो भक्त प्रह्लाद की रक्षा को असम्भव और अदृष्टश्रुत रूप धर कर प्रगट हुए। और स्तंभ से प्रगट होना यह व्यापकत्व गुण का भी पूर्ण उदाहरण है।

परमेश्वर में जो सृष्टि पालन एक गुण है, मत्स्य, वाराहादि उसके उदाहरण हैं।

परमेश्वर में जो ज्ञान रक्षा एक गुण है, हयग्रीव उसके निदर्शन हैं।

परमेश्वर में जो दुष्ट दमन गुण है, परशुराम जी उसके उदाहरण हैं।

परमेश्वर में जो मर्यादा पालन सदाचार सत्यसंधतादि गुण है, भगवान् श्री रामचन्द्र जी उनके निदर्शन हैं।

जगदीश्वर में जो दुष्टदमन सद्रक्षण जगन्मोहनत्व ज्ञानोपदेष्टत्वादिक नित्य नवीन अनंत गुण है, उन का निदर्शन भगवान् श्री कृष्ण हैं

बस जब भक्त गण जिस मूर्ति का ध्यान वा अर्चन करते हैं, तब सर्व गुण मय परमेश्वर के उसी अनुपम गुण पर अपना सर्वस्व वार कर कृत कृत्य हो जाते हैं।

यहां पर एक शंका यह भी लोग किया करते हैं कि जब भगवान् सत्य संकल्प हैं तब वो इच्छा से क्या नहीं कर सकते हैं? परन्तु इस का उत्तर बड़ा सरल है कि इच्छा से करने का जो अर्थ है अवतार धारण करके कार्य्य करने का भी वही अर्थ है, क्योंकि अवतार सब इच्छा शक्ति के ही विलास हैं; वो

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

जड़ जगत् में रह कर भी चिच्छक्ति मय हैं, बस फिर क्या ?

एक कुतर्क यहां पर और किया करते हैं कि जब परमेश्वर ने अवतार लिया और परिच्छिन्न मूर्ति हुई तब व्यापक कहां रहा? और जो व्यापक भी है तो किसी दूसरे रूप से है वा उसी रूप से परिच्छिन्न और व्यापक है ?

इस प्रश्न के उत्तर सुनने से प्रथम यह और जान लेना चाहिये कि जब तक तुम को पदार्थविद्या न आवेगी और तुम जड़ विज्ञान में पारदर्शी नहीं हो, ऐश्वर ज्ञान लाभ करना बड़ा कठिन होगा; देखो पृथ्वी एक व्यापक तत्व है आप कह सकते हैं कि मिट्टी में पृथ्वी है बालू में नहीं वा बालू मे है पत्थर में नहीं। कदापि नहीं ! उस एक ही व्यापक पृथ्वी के ये सब रूपान्तर हैं। परन्तु इनमें विशेष अंतर है इसलिये दूसरा उदाहरण लो ! एक नदी में पर्वत के झरना से समुद्र तक जल व्याप्त है, कहीं चद्दर, कहीं तरंग, कहीं भँवर हैं क्या तुम समझ सकते हो कि तरंग में जल है भँवर में नहीं ? कभी नहीं ! क्योंकि उस व्यापक जल की ये सब क्रिया भेद मात्र है। अथवा इसको यों समझो कि वायु समस्त देश में व्याप्त है, परन्तु कल ३ बजे जो आँधी आई थी वह प्रयाग से आगरे तक थी, दानापूर पटने में उसका कुछ लेश न था और दिल्ली ग़ाज़ियाबाद में नाम भी न था, प्रत्युत पवन बंद था और ऊमस थी। क्या आप यह विचार सकते हैं कि जिस समय प्रयाग से आगरे तक आँधी थी उस समय ब्रह्माण्ड में

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्रीलक्ष्मीधर - विद्यामन्दिर
देवप्रयाग (अलकनन्दा-भागीरथी)
व्यवस्थापक- [रामकृष्ण जोशी]

१४८८
आर्य. १२

और कहीं वायु न था ? हां ! भाई बुद्धि को परिश्रम दो विज्ञान पर दृष्टि दो, कोरे तर्कों से कुछ नहीं होता है। वायु ब्रह्माण्ड भर में है ही उसको कौन रोकता है परन्तु प्रयाग से आगरे तक उसकी एक उन्नति और वेगवती क्रिया थी, और दिल्ली में मन्द क्रिया थी, इन क्रिया भेदों से क्रिया का द्वैविध्य होता है न कि पवन का अभाव। ऐसा ही भगवान् तो सर्वव्यापक हैं परन्तु जब अयोध्या, मथुरा प्रभृति में परिच्छिन्न श्री राम कृष्ण मूर्त्ति से क्रियान्तर वा व्यापारान्तर करते हैं तब व्यापकता का अभाव नहीं होता है, इस प्रश्न को मीमांसा को थोड़ा अभिनिवेश पूर्वक विचार ने से जो तुम्हारे दुस्तर्क होंगे सब स्वतः कटते जायँगे। जब जब जड़पदार्थ में व्यापकता और परिच्छेद है, तब चिद्घन नित्याचिंत्य विरुद्ध निखिल शक्ति भाजन परमेश्वर में क्या ऐसे अल्पज्ञता के प्रश्न चल सकते हैं ? कदापि नहीं।

एक छोटासा कुतर्क का बच्चा और बचा है वह यह है, कि परमेश्वर साकार सही, उस की प्रतिमा सही, परन्तु उसको स्नान कराना उस पर चंदन, पुष्प चढ़ाना इन बातों का क्या प्रयोजन है? क्या परमेश्वर आप के इन उपचारों का भूखा है? वा उस को कुछ अभाव है ?

इस का उत्तर हम आप को कुछ पूछ लेने के अनंतर देंगे, यदि तुम नास्तिक हो तो हम इस का उत्तर नहीं देना चाहते हैं, यदि आस्तिक हो तो ईसाई, मुसलमान, विदेशीय प्रतिमा पूजन निषेधक हो, चाहे ब्राह्म वा आर्य्य समाजस्थ

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

देशीय प्रतिमा पूजन के निषेधक हो तो हमारे उत्तर को विचारो कि तुम जो परमेश्वर को स्तुति प्रार्थना करते हो क्या परमेश्वर को उस की अपेक्षा है? क्या आप के स्तुति न करने से परमेश्वर लोक में श्लाघ्य और स्तुत्य नही है ? वह उत्तम श्लोक आप को स्तुति से यशस्वी कदापि न होगा ; अवश्य इस का उत्तर तुम यही दोगे कि वह स्तुति प्रार्थना हमारे मन वाणी को पवित्र करने को है नकि परमेश्वर के बढ़ाने को। बस इसी तरह नित्यानंद निज लाभ तुष्ट पूर्ण काम परमेश्वर हमारी माला चंदन निवेद्यान्नादि की कोई अपेक्षा नहीं करता है किन्तु वह हमारे समस्त भोग और इन्द्रियार्थों के पवित्र करने को पूजन किया जाता है ॥

अनेक लोगों का यह भी कुतर्क है कि प्रतिमा पूजक लोगों का एकेश्वर वाद नहीं रहता है, वे लोग परमेश्वर की प्रतिमा के भिन्न काष्ट के सिंहासन, यान, (सवारी) छत्र, पादुका, देहली आदि पदार्थों का भी पूजन करते हैं। परन्तु इस का उद्देश बड़ा गूढ है, सर्व व्यापक सर्व शक्तिमान् परमेश्वर को प्रतिमा पूजक लोगो ने ही जाना है क्योंकि ईश्वर के आधार और परिच्छदों का पूजन इस लिये है कि वे सब उस ईश्वर की शक्ति विशेष ही हैं, वही अपना आधार और अपना आप यान [सवारी] और अपना आप परिच्छद अर्थात् छत्र, पादुका, दर्पण, व्यजनादि है, उस अद्वितीय का सहायक दूसरा कोई है ही नहीं आप ही सर्व रूप हैं इसी को निरुक्तकार यास्क ने कहा है—

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

"महाभाग्याद्देवताया: एक आत्मा बहुधा स्तूयते एकस्यात्मनोऽन्ये देवा: प्रत्यङ्गानि भवन्ति, कर्म जन्मान:, आत्मजन्मान: आत्मैवेषां रथो भवत्यात्माश्व: आत्मायुध मात्मेषव: आत्मा सर्वं देवस्य देवस्य नि० अ० ७ खं० ४

इस का अर्थ स्पष्ट है कि वह आत्मा मुख्य है और सब देवता उस के अंग हैं वह आप हो रथ आपही घोड़ा आपही आयुध आपही बाण और आपही सब है॥

अनेक लोग यह कहते हैं कि प्रतिमा पूजक लोग ईश्वर की व्यापकता नहीं रखते हैं क्योंकि वे लोग एक प्रतिमा ही में ईश्वर मानते हैं अन्यत्र नहीं। पर यह दोष प्रतिमा पूजन के निषेधकों पर भी पूरा है कि वे सर्वत्र व्यापक परमेश्वर को मानते हैं, परन्तु प्रतिमा में नहीं मानते हैं तो जब सब जगह उनका परमेश्वर है और हमारी प्रतिमाओं में नहीं है तब भी व्यापक न ठहरा॥

एक छोटी सी शंका और है उसे भी निवृत्त करे देते हैं-वह यह है कि शास्त्र में कहीं २ ईश्वर को निराकार लिखा है। परन्तु विचार करना चाहिये कि "प्राप्तौ सत्यां निषेध:" अर्थात् जो बात होती है उसी का निषेध होता है, जब ईश्वर के आकार हैं तब उसका निषेध है, क्योंकि धर्म शास्त्र में वा क़ानून में कहीं तारे चुराने का वा आकाश जलाने का पाप, प्रायश्चित्त, वा दंड नहीं लिखा है क्योंकि तारे चुराये नहीं जासकते हैं और आकाश जलाया ही नहीं जा सक्ता

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

है, फिर इस का निषेध क्या होता? भला कहिये तो आप के वेद में कहीं कान से भोजन करने का वा नाक से पेशाब करने का निषेध है। जो होता नहीं उस का निषेध नहीं होता है, बस यदि परमेश्वर का आकार न होता तो उस का निषेध कब होसक्ता था? हां! जहां पर परमेश्वर के आकार का निषेध है वहां यह है कि उस का आकार जड़ वा प्राकृत नहीं परन्तु चैतन्य घन है; हां! जो शब्दार्थ में भ्रम हो गया इसे भी निवृत्त करे देता हूं

यजु० ४० अ० में लिखा है 'ओंखं ब्रह्म' इस का अर्थ लोग समझ रहे हैं परमेश्वर आकाश के समान निराकार शून्य प्राय है। परन्तु वेद का अर्थ जानना बड़ा कठिन है जब तक साङ्ग चारो वेद न पढ़े जायँ क्या हो सकता है इसी मंत्र का अर्थ अथर्व वेद के गोपथ ब्राह्मण के २ प्र० ८ से जाना जाता है, 'मूर्त्ति आकाशश्वेत्वा, मूर्तिर्यांजुषी अर्थात् यजुर्वेद में जो आकाश शब्द है वह मूर्ति का वाचक है। कहिये अब आप 'खंब्रह्म' का अर्थ समझिये कि ब्रह्म मूर्तिमान् है न कि शून्य।

हाल में प्राण प्रतिष्ठा विषय में दो शङ्काएँ और हुई हैं उनको भी लगे हाथ यहीं पर निबटाये देते हैं।

प्रथम यह कि 'अवकाशरहित काष्ठ पाषाणादि में प्राण वायु का गमनागमन किस तरह होता है'। इसका उत्तर यह है कि क्या परमेश्वर का जीवन प्राणिओं के भांति प्राण के आधीन है? यदि ऐसा हो तो एक जगह प्राण प्रतिष्ठा

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

करने से दूसरे जगह परमेश्वर प्राणरहित भी हो सकता है हंत! धन्य है ऐसे लोगों को जो परमेश्वर को प्राणाधीन मान कर ऐसे प्रश्न करने को साहसी होते हैं। प्राण नाम परमेश्वर का है और प्रतिष्ठा नाम यज्ञ का (एक प्रकार के कर्म का) है। कुछ प्राण प्रतिष्ठा नाम परमेश्वर के प्राण बुला लेने का नहीं है।

दूसरो यह कि 'जो प्राण प्रतिष्ठा के मंत्र सत्य हैं तो उन से मरे हुये अपने पिता के शरीर में प्राण प्रतिष्टा कर उसे क्यों नहीं जिवा देते' इसका उत्तर हम 'आर्य्य समाजीय रहस्य' में दे चुके हैं, तथापि यहां कुछ लिखते हैं, यह तो हम सिद्ध कर ही चुके हैं कि प्राण प्रतिष्ठा एक वैदिक कर्म है कुछ प्राण बुलाना नहीं है, तथापि यदि प्राण बुलाना ही समझा जाय और बुलाने से प्राण न आवे तो उसके लिए हम क्यों ज़िम्मेदार किये जाते हैं? आप क्यों नहीं होते? जब 'जीवे मशरदः शतं' से आप सौ वर्ष जीते नहीं 'पश्येम शरदःशतं' से अन्धे होने से नहीं बचते। 'शृणु-यामशरदःशतं' से बहरे होने से नहीं बचते। 'योस्मान् द्वेष्टि' से शत्रु दमन नहीं कर सकते हैं। तब प्राण प्रतिष्ठा मंत्र से प्राण न बुला देने पर हमारा ही क्यों अविश्वास होता है, कुछ समझ में नहीं आता, अब हम अपने पाठकों को एक उपहार देकर ग्रन्थ समाप्त करते हैं कि आप लोग प्रतिमा पूजन का निषेध सुनकर खिन्न न हों और इस को नया न समझें क्योंकि बहुत दिन से प्रतिमा पूजन का

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

विरोध चला आता है; देखिये अबिरहाम, मूसा, ईसा मसीह मुहम्मद प्रभृति सब ही प्रतिमा पूजन के निषेधक थे; यह तो केवल वैदिक हिन्दू समाज ही का सनातन धर्म है जो क्षुद्र सन्दर्भ द्वारा आप लोगों को आवेदित हुआ।

समाप्तम्।

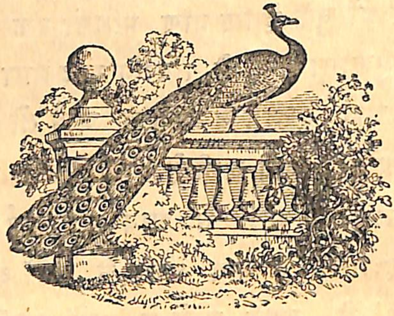

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

Printed at the " A. K. Press, " Mirzapur.

BY

Pandit Jagan Nath Tiwari, *Manager*.

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

ये अमूल्य रत्न आप ही के लिये हैं !

मूल्य

१ उपासना तत्व (युक्ति और वेद मंत्रों से मूर्ति पूजन) विविध भाषा के विभिन्नमत समाचार पत्रों द्वारा प्रशंसित ... ... ≶)॥ मात्र

२ आर्य्य समाजीय रहस्य—आर्य्य समाज के समस्त सिद्धान्त और लीला १० मिनट में देख लो पसंद न हो पुस्तक फेर दो ... ... ≶)॥ मात्र

३ आत्मविद्या (मिसमेरीज़म्-स्पिचुअलिज़म्) कोठरी में बैठे २ त्रिलोकी का हाल जान लो मृतपुरुषों से बात कर लो ... ... ≶)॥ मात्र

४ वैश्यवंश विचार (अग्रवालों के वैश्यत्व यज्ञोपवीत गायत्री का विधान) ... ...)॥ मात्र

डाक महसूल माफ। आठ आने की पुस्तक लेनेवालों वैष्णव धर्म के मूलतत्व उपहार

धर्म प्रचारक आचार्य्य
श्री मधुसूदन गोस्वामी
...वन जि० मथुरा

श्रीलक्ष्मीधर - विद्यामन्दिर,
देवप्रयाग (गढ़वाल-हिमालय)
व्यवस्थापक- प. [illegible]

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri